International Journal of Science and Social Science Research [IJSSSR] ISSN: 2583-7877

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के श्लोकचतुष्टय : एक विमर्श

श्रीनन्दन पाण्डेय

असिस्टेन्ट प्रोफेसर, विवेकानन्द ग्रामोद्योग महाविद्यालय दिबियापुर, औरैया, उत्तर प्रदेश

Author Email: srinandanpandey@gmail.com

शोध आलेख सार–संस्कृत वाङ्मय में विद्वज्जनों के द्वारा उक्त यह सूक्ति सर्वाधिक प्रसिद्ध है–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।

तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्।।

अर्थात् काव्यों में नाटक रमणीय होता है, नाटकों में अभिज्ञानशाकुन्तलम् रमणीय है, अभिज्ञानशाकुन्तलम् में भी चतुर्थ अंक रमणीय है और चतुर्थ अंक में भी चार श्लोक सर्वाधिक सुंदर हैं। अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक के चार श्लोक अपने भाव, कल्पना, कवित्व और अर्थोदात्तता के कारण अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, और इनमें कहे गए उपदेशों के अनुकरण से आदर्श समाज स्थापित हो सकता है। वात्सल्य विप्रलम्भ एवं भाव–सौन्दर्य की दृष्टि से चार श्लोक अत्यन्त श्लाघनीय हैं।

सङ्केत शब्द– यास्यत्यद्य, पातुं न प्रथमं, अस्मान् साधु, शुश्रूषस्व गुरून्, विदाई, प्रकृति चित्रण, आदर्श संदेश, आदर्श शिक्षा इत्यादि।

I. प्रस्तावना

प्रमथतः काव्य के दो भेद कहे गए हैं– श्रव्यकाव्य और दृश्यकाव्य। दृश्यकाव्य में नाटक विधा सर्वाधिक लोकप्रिय है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् विश्व का सर्वाधिक प्रसिद्ध एवं सर्वश्रेष्ठ नाटक है।

पाश्चात्य एवं भारतीय आलोचक विद्वान् अभिज्ञानशाकुन्तलम् या शाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए उसके चार श्लोकों की भावगम्भीरता, सरसता, सहजता, कर्त्तव्यबोधकता, मार्मिकानुभूति और सर्वोत्कृष्टता की दृष्टि से विशेष गुणगान करते हैं। **तत्र श्लोकचतुष्टयम्** के संबंध में विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ विद्वान् **'पातुं न०'** और **'अस्मान् साधु०'** के स्थान पर क्रमशः **'भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी'० (4/20)** और **'अभिजनवतो भर्तुः श्लाघ्ये स्थिता गृहिणी–पदे० (4/16)** को चार श्लोकों के अन्तर्गत समाविष्ट करते हैं।[1]

परन्तु अधिकांश विद्वान् अभिज्ञानशाकुन्तलम् के जिन चार श्लोकों को श्लोकचतुष्टय के अन्तर्गत सम्मिलित करते हुए एकमत हैं वे हैं–**यास्यत्यद्य शकुन्तलेति (4/6), पातुं न प्रथमं व्यवस्यति (4/9), अस्मान् साधु विचिन्त्य (4/17), शुश्रूषस्व, गुरून् कुरु (4/18)**

उपर्युक्त चारों श्लोक शार्दूलविक्रीडितम् छन्द में वर्णित हैं। अतः यहाँ इन चार श्लोकों का सविस्तार वर्णन समीचीन है। कविकुलगुरु कालिदास द्वारा रचित अभिज्ञानशाकुन्तलम् विश्व का सर्वाधिक लोकप्रिय नाटक है, इसी नाटक के आधार पर कालिदास को भारत का शेक्सपीयर कहा जाता है। कहा भी गया है–**कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञानशाकुन्तलम्।**[2] अभिज्ञानशाकुन्तम् में कुल सात अंक हैं। इन अंकों में चतुर्थ अंक सर्वाधिक प्रसिद्ध है, क्योंकि **अभिज्ञानशाकुन्तले चतुर्थेऽहटे कविः कण्वरूपेण उपस्थितोऽस्ति।**[3] अर्थात् अभिज्ञानशकुन्तल के चतुर्थ अंक में कवि कालिदास कण्व के रूप में स्वयं उपस्थित हो जाते हैं। इस अंक में शकुन्तला अपने पति दुष्यन्त के घर जा रही है। पुत्री शकुन्तला के विदाई के समय धर्मपिता महर्षि कण्व जिन चार श्लोकों का कथन करते हैं वे भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं। प्रथम श्लोक में पिता का पुत्री के वियोगजन्य दुःख का मार्मिक वर्णन किया गया है, दूसरे श्लोक में प्रकृति–प्रेम का वर्णन, तृतीय श्लोक में पिता द्वारा पुत्री के पति के लिए आदर्शसंदेश तथा चतुर्थ श्लोक में पुत्री को उपदेश दिया गया है। श्लोकचतुष्टय के इन चारों श्लोकों के अन्तिम पद में सूक्तियां हैं जिसके कारण इसका महत्व और भी बढ़ जाता है।

II. पुत्री की विदाई का मार्मिक वर्णन

अर्थो हि कन्या परकीय एव[4]

पुत्री को पराया धन कहा जाता है। श्रीरामचरितमानस में भी कहा गया है–**पराधीन सपनेहुँ सुखु नाहीं।**[5] भारतीय आर्य संस्कृति में प्राचीनकाल से परम्परा चली आ रही है कि पुत्री विवाह के बाद किसी दूसरे कुल में जाती है और वहाँ की पारिवारिक जिम्मेदारी को निभाती है। पुत्री अपने पतिगृह के कर्त्तव्यों को ठीक ढंग से निर्वहन करे और सुखमय जीवन व्यतीत करे। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर शकुन्तला के पालक धर्मपिता महर्षि काश्यप उसे आशीर्वाद के साथ–साथ उपदेश रूपी एक ऐसी अमूल्य निधि देते हैं जो त्रिकालजयी बन जाती है।

[1] संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, पृष्ठ 343
[2] संस्कृत–निबन्ध–शतकम, पृष्ठ 91
[3] संस्कृत शास्त्र–मञ्जूषा, पृष्ठ 189
[4] अभिज्ञानशाकुन्तलम् ४/२२, पृष्ठ 71
[5] श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड, दोहा– १०१/३ गीतप्रेस गोरखपुर

जब शकुन्तला के आश्रम से विदाई का समय का आता है तो संयमी महर्षि कण्व भी अधीर होकर बोलते हैं–

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया

कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।

वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः

पीड्यन्ते गृहिणः कथं तु तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः।।[6]

अर्थात् आज शकुन्तला जायेगी, इसलिए मेरा हृदय दुःख से भर गया है, बहते आँसुओं को रोकने से मेरा गला रुँध गया है, चिन्ता के कारण मेरी दृष्टि निश्चेष्ट हो गई है। वन में रहने वाले मुझे शकुन्तला के प्रति प्रेम के कारण इस प्रकार का दुःख हो रहा है तो गृहस्थ लोग पहली बार पुत्री–वियोग के दुःख से कितने अधिक दुःखित होते होंगे।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक में शकुन्तला की विदाई का पूरा प्रसंग वात्सल्य विप्रलम्भ में वर्णित है[7]; किन्तु कुछ विद्वान करुण रस की सत्ता मानते हैं, अचार्य भवभूति ने करुण रस को ही प्रधान माना है। **मीमांसाशास्त्र के अनुसार भी कन्यादान के समय पढ़े जाने वाले संकल्प में 'ú तत्सत्' तो कहा जाता है, किन्तु 'न मम' नहीं कहा जाता, क्योंकि कन्या के साथ माता–पिता आदि का ममत्व सम्बन्ध तो रहता ही है, अतः ऐसे में 'शोक' नामक स्थायी भाव को अवसर नहीं मिलता, इसलिए सचमुच यह वत्सलता का विप्रलम्भ ही है और यह भी कन्या के प्रथम वियोग के समय अधिक, शेष अवसरों पर क्रमशः कम होता ही जाता है।**[8] महर्षि कण्व दैवयोग से प्राप्त पुत्री शकुन्तला का पालन–पोषण करते हैं और उसके भाग्य को अनुकूल बनाने के लिए सोमतीर्थ भी जाते हैं। एक पिता पुत्री के सुख के लिए क्या–क्या नहीं करता? शकुन्तला के गान्धर्व विवाह को छन्दोमयी वाणी द्वारा जानकर, शकुन्तला को अनुमति देकर अपने शिष्यों से संरक्षित हस्तिनापुर भिजवाते हैं।

महर्षि कण्व अपनी पालिता पुत्री शकुन्तला के विदाई के समय इतना दुःखी होते हैं कि उनका गला रुँध जाता है। उनके द्वारा कहे गए एक–एक शब्द को सुनकर सभी व्यथित हो जाते हैं और सभी के आँखों से आँसू बहाने लगता है। उनका लौकिक ज्ञान सहज व्यवहार में दिखलाई पड़ता है। चाहे मनुष्य किसी भी धर्म, जाति या सम्प्रदाय का क्यों ना हो कन्या की विदाई के समय सभी की आँखें नम हो जाती हैं, फिर तो उनकी क्या दशा होती होगी जिनकी अपनी पुत्री विवाहोपरान्त विदा हो रही हो; उस समय माता–पिता अवश्य ही पुत्री के विरह दुःख से पीड़ित होते होंगे। यहाँ शकुन्तला की माँ नहीं है, अतः धर्मपिता कण्व का दुःख और भी द्विगुणित हो जाता है। महर्षि कण्व वितरागी हैं और गाँव से दूर आश्रम में निवास करते हैं। वह अनुभव करते हैं कि यदि मुझ वितरागी की पुत्री के विदाई के समय यह स्थिति है; तो जो गृहस्थाश्रम में रहने वाले हैं जिनमें वैराग्यभाव नहीं है वह अपनी पुत्री के पहली बार विदा होते समय कितने दुःखी होते होंगे इस पीड़ा का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

III. प्रकृति चित्रण एवं पर्यावरणीय शिक्षा–

लोकचतुष्टयम् के द्वितीय श्लोक में महर्षि कण्व तपोवन के वृक्षों से प्रतिगृह जाती हुई शकुन्तला को अनुमति देने का आग्रह करते हुए कहते हैं कि–

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेसु या

नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।

आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः

सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।।[9]

अर्थात् जो शकुन्तला तुम्हें जल पिलाए बिना पहले जल नहीं पीती थी, तुम्हारे प्रति प्रेम के कारण जो अलंकारों की प्रेमी होने पर भी तुम्हारे नये पत्तों नहीं तोड़ती थी। तुम्हें पहली बार पुष्प आने पर जिसका उत्सव होता था, वह शकुन्तला आज पतिगृह को जा रही है, तुम सब अपनी स्वीकृति दो।

शकुन्तला प्रकृति प्रेमी है।जिसका कारण यह है कि उसका लालन–पालन प्रकृति की गोद में हुआ है जहाँ प्रकृति ही उसकी सहचारी है। शकुन्तला और प्रकृति एक दूसरे के विना अधूरे हैं। वनवृक्ष उसके भाई हैं, मृगशावक उसका कृतकपुत्र है और वनज्योत्सना उसकी बहिन है; वह प्रतिदिन पहले वृक्षों को सिंचती है फिर स्वयं पानी पीती है। इसके माध्यम से महर्षि कण्व समाज को यह उपदेश देना चाहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को पेड़ लगानातथा उसकी देखभाल करना चाहिए तभी हमारा पर्यावरण स्वच्छ रहेगा और हमें स्वच्छ वायु मिल सकेगी। शकुन्तला आभूषण प्रिय है और उसके आभूषण वृक्षों के पल्लव हैं। प्रेम के कारण वह पत्तों को भी नहीं तोड़ती है। हमें अनावश्यक पेड़–पौधों को नहीं काटना चाहिए। धनलोभवश मानव लगातार वृक्षों को काटता जा रहा है जिसके कारण प्रदूषण जैसी समस्या उत्पन्न होती जा रही है और हमें शुद्ध वायु भी नहीं मिल पा रही है। इसलिए हम सभी को ज्यादा से ज्यादा वृक्षों को लगाना चाहिए।मत्स्य पुराण में भी वृक्षों का महत्व बताते हुए कहा गया है–**दशपुत्रसमो द्रुमः।**[10] अर्थात् एक वृक्ष

[6] अभिज्ञानशाकुन्तलम् ४/६
[7] संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पृष्ठ 340
[8] परिशिष्ट, कालिदास ग्रान्थावली, पृष्ठ 670
[9] अभिज्ञानशाकुन्तलम् ४/६
[10] मत्स्य पुराण 154/512

दश पुत्रों के बराबर है। जब वृक्षों में पुष्प आते थे तो शकुन्तला उत्सव मनाती थी। सभी को कोई एक उत्सव या पर्व वृक्षों के सन्निकट या प्रकृति की गोद में मनाना चाहिए इससे हमारा पर्यावरण के प्रति लगाव बढ़ता है।

पुत्री की विदाई के समय पिता अपने निकट संबंधियों से कहता है कि हमारी पुत्री अब पति के घर जा रही है आप सभी लोग उसके अपराधों को क्षमा करें और उसे जाने की आज्ञा दें; यहाँ वृक्ष भी परिवारजन ही हैं। अतः पिता कण्व उनसे भी पुत्री के लिये यहाँ आज्ञा माँगते हुए दिखलाई पड़ते हैं।

IV. पिता द्वारा पुत्री के पति के लिए आदर्श सन्देश–

श्लोकचतुष्टय के तृतीय श्लोक में महर्षि कण्व राजा दुष्यन्त के लिए अपना विनम्र सन्देश भेजते हुए कहते हैं कि–

अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मन–

स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्ति च ताम्।

सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया

भाग्यायत्तमतः परं न खलु तद् वाच्यं वधूबन्धुभिः।।[11]

अर्थात् संयमरूपी धन वाले हम लोगों का, अपने ऊँचे कुल का और तुम्हारी ओर इस शकुन्तला के, बन्धुओं के द्वारा न किए हुए, स्वाभाविक प्रेम–व्यापार का ठीक विचार करके तुम इसको अपनी स्त्रियों में सबके समान गौरव के साथ देखना। इससे आगे भाग्य के अधीन है, इससे अधिक हम वधू के संबन्धियों को नहीं कहना चाहिए ।

भारतीय संस्कृति में कन्या का विवाह अपने से उच्चकुल में किया जाता है तथा गोत्र भी अलग–अलग होते हैं। सगोत्रीय विवाह वर्जित है। पतिकुल को हमेशा उच्च तथा आदर की दृष्टि से देखा जाता है। महर्षि कण्व के माध्यम से महाकवि कालिदास का यह सन्देश है कि व्यक्ति को हमेशा अपने कुल परम्परा को आदर्श मानकर अनुकरण करना चाहिए। ऐसा करने से वह कभी भी ऐसा पतित आचरण नहीं करेगा जिससे उसकी कुलमर्यादा तार–तार हो; सभी को अपने कुल की मान–मर्यादा का हमेशा ध्यान रखना चाहिए।

महर्षि काश्यप ने इतने कम शब्दों में कितनी सारगर्भित बात कही है, इसके साथ ही साथ यह भी सन्देश दिया है कि वधू के परिवारजनों को उसके पतिगृह में ज्यादा हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए नहीं तो गृहकलह की सम्भावना बनी रहती है और परिवार बिखर जाते हैं।

आज दूरसंचार का युग है आजकल बातें शीघ्र ही एक दूसरे के पास पहुँच जाती हैं। वधूपक्ष के लोगों का कन्या के ससुराल पक्ष में जरूरत से ज्यादा हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए ज्यादा हस्तक्षेप करने से बात बनने के स्थान में बिगड़ जाती हैं और घर में हमेशा कलह का वातावरण बना रहता है। आज समाज में अधिकांश पुत्री के घर अनर्गल बातों के कारण टूट रहे हैं और समाज में विवाह–विच्छेद की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। वर्तमान समय में यदि पुत्री के माता–पिता इस कारण को समझ लेंगे तो उनकी पुत्री का घर टूटने से बच जाएगा और पुत्री ससुराल में अपना जीवन सुख–पूर्वक बिता सकेंगी।

V. पुत्री को पतिगृह के लिए आदर्श शिक्षा–

इस श्लोक–चतुष्टयी के चतुर्थ श्लोक में महर्षि काश्यप शकुन्तला को उपदेश देते हुए कहते हैं–

शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्ति सपत्नीजने

भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।

भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी

यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।।[12]

अर्थात् अपने गुरुजनों (मान्यजनों) की सेवा करना, अपनी सपत्नियों (सौतों)–से प्रिय–सखी का–सा व्यवहार करना, तिरस्कृत होने पर भी क्रोध के आवेश में आकर पति के विरुद्ध आचरण मत करना, अपने सेवकों पर अत्यन्त उदार रहना, अपने ऐश्वर्य का अभिमान मत करना, इस प्रकार आचरण करने वाली स्त्रियाँ गृहलक्ष्मी के पद को प्राप्त करती हैं और इसके विपरीत आचरण करने वाली कुल के लिए मानसिक पीड़ा देने वाली होती हैं।

पाणिग्रहण संस्कार के बाद पतिकुल पहुँचकर पुत्री यदि अपने सुष्ठु आचरण एवं अपने कर्त्तव्यों का ठीक ढंग से निर्वहन नहीं करती है तो उसके पितृकुल पर सारा दोष मढ़ दिया जाता है; चाहे माता–पिता ने कितने ही अच्छे आचरण से अपनी कन्या का पालन पोषण किया हो। महर्षि कण्व शकुन्तला को उपदेश देते हुए कहते हैं कि ससुराल पहुँचने पर अपने से बड़े लोगों का सम्मान एवं उनकी अच्छी प्रकार से देखभाल करना ही अपना परम धर्म समझना। आधुनिक समाज में मानव भाग–दौड़ की जीवन में अपने बुजुर्गों की उपेक्षा करता जा रहा है। महाकवि कालिदास ने महर्षि कण्व के माध्यम से समाज को यह संदेश दिया है कि हम सभी को अपने बुजुर्गों की अच्छी प्रकार से देखभाल करनी चाहिए। आजकल वृद्धों की उपेक्षा के कारण वृद्धाश्रमों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है, सन्तान अपने पूज्यजनों का तभी तक सेवा करते हैं जब तक उनसे स्वार्थसिद्धि होती रहती है; जैसे ही उनसे स्वार्थलाभ होना बंद हो जाता है, वह उन्हें वृद्धाश्रम भेजने में देर नहीं लगाते। प्राचीन काल में राजतंत्र शासन में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित

[11] अभिज्ञानशाकुन्तलम् ४/१७
[12] अभिज्ञानशाकुन्तलम् ४/१८

थी अतः महर्षि कण्व शकुंतला से कहते हैं कि राजा दुष्यन्त की सब पत्नियों से सखी के समान व्यवहार करना; लेकिन आज के समय में बहुपत्नी पद्धति नहीं है। आगे वह कहते हैं कि पति से लड़ाई में अपमानित होकर उसके विरुद्ध आचरण मत करना। इसका आशय है कि पति–पत्नी में कभी–कभी लड़ाई–झगड़ा हो जाता है तो एक पक्ष को शांत हो जाना चाहिए, एक पक्ष के शांत होने पर दूसरा पक्ष अपने आप शान्त हो जाता है। समाज में आजकल दम्पति छोटी–छोटी बातों को लेकर के आत्महत्या जैसी कठोर निर्णय ले लेते हैं; जिससे उनका परिवार बिखर जाता है। महर्षि कण्व शकुन्तला से मिथ्याभिमान से दूर रहने तथा अपने सेवकों के प्रति सद्व्यवहार रखने के लिए भी कहते हैं। महर्षि कण्व कहते हैं कि सदाचरण करने वाली वधू गृहलक्ष्मी–पद को सुशोभित करती हैं; और जो इनके विरुद्ध आचरण करती हैं वह दोनों कुलों को मानसिक पीड़ा देने वाली होती हैं। अतः वधूओं को हमेशा दोनों कूलों के सम्मान को ध्यान रखते हुए सदाचरण करना चाहिए, जिससे दोनों कूलों का मान–सम्मान बढ़े और उन्हें उज्ज्वल कीर्ति प्राप्त हो।

VI. निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि अभिज्ञानशाकुंतलम् में वर्णित चतुर्थ अंक के ये चार श्लोक आज के समय में निश्चित रूप से वधूओं को हर जगह सम्मान दिलाने में समर्थ हैं। काव्य का उद्देश्य है **'चतुर्वर्ग की प्राप्ति'**, ये चार श्लोक भी पुरुषार्थचतुष्टय के मार्ग को प्रशस्त करते हैं। जिसके विना गार्हस्थ्य जीवन में पूर्णता नहीं हो सकती है। मानव जीवन के पथ को सुगम बनाने के लिए सभी को इन उपदेशों को जीवन में अनुकरण करना होगा, तभी एक सभ्य और आदर्श समाज का निर्माण हो सकेगा और मानव जीवन उन्नति के साथ–साथ मानवीय मूल्य को भी जीवित रख सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1– संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, डॉ० कपिलदेव द्विवेदी आचार्य, रामनारायणलाल विजयकुमार इलाहाबाद, संस्करण –२००७
2– संस्कृत–निबन्ध–शतकम्, डॉ० कपिलदेव द्विवेदी आचार्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, संस्करण –१९९९
3– संस्कृत शास्त्र–मञ्जूषा, डॉ० उदयशंकर झा, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, संस्करण –२०१२
4– अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ० वासुदेव कृष्ण चतुर्वेदी, महालक्ष्मी प्रकाशन आगरा, संस्करण – १९८१–८२
5– कालिदास ग्रान्थावली, डॉ० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, संस्करण –२००९
6– श्रीरामचरितमानस, गीतप्रेस गोरखपुर
7– मत्स्य पुराण, गीतप्रेस गोरखपुर
8– सप्तगXम्, संस्कृतगXा दारागT, प्रयागराज